International Journal of Applied Research 2017; 3(1): 994-998

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2017; 3(1): 994-998
www.allresearchjournal.com
Received: 17-11-2016
Accepted: 22-12-2016

सुमन कुमारी
शोधप्रज्ञा, विश्वविद्यालय
समाजशास्त्र विभाग, ल.ना.मि.वि.,
दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
सुमन कुमारी
शोधप्रज्ञा, विश्वविद्यालय
समाजशास्त्र विभाग, ल.ना.मि.वि.,
दरभंगा, बिहार, भारत

अन्तरपीढ़ी संघर्ष एवं प्रजातीय क्षेत्र में अन्तर

सुमन कुमारी

सारांश
एक प्रजाति और दूसरी प्रजाति में शारीरिक अन्तर स्पष्टतः दिखाई पड़ते हैं और जब दो भिन्न प्रजातियाँ एक दूसरे के सम्पर्क में आती है तो कई बार उनमें संघर्ष भड़क उठता है। इसे ही प्रजातीय संघर्ष कहते हैं। इस प्रकार के संघर्ष अमेरिका में श्वेत और नीग्रों प्रजातियों और अफ्रीका में श्वेत और श्याम प्रजातियों के लोगों के बीच पाये जाते हैं। प्रजातीय संघर्ष का एक प्रमुख कारण अपनी प्रजाति को अन्य प्रजातियों की तुलना में श्रेष्ठ समझने की अवैधानिक धारणा है। यद्यपि प्रजातीय संघर्ष के लिए सांस्कृतिक भिन्नता और विशेषतः आर्थिक हितों का टकराव प्रमुख रूप से उत्तरदायी है। प्रजातीय संघर्ष के लिए हीन समझी जाने वाली प्रजाति का आर्थिक शोषण भी एक मुख्य कारक है। पुरानी पीढ़ी में प्रजातीय भेद की भावना अधिक पायी जाती है, जबकि नई पीढ़ी इस भेद को अवैधानिक मानती है। इस प्रजातीय भेद के कारण भी पुरानी एवं नवीन पीढ़ी में अन्तर पीढ़ी संघर्ष पाया जाता है।

प्रस्तावना
नयी या युवा पीढ़ी और पुरानी या वृद्ध पीढ़ी के बीच पाया जाने वाल भेद अन्तर–पीढ़ी संघर्ष के लिए काफी सीमा तक उत्तरदायी है। पुरानी और नवीन पीढ़ी के मूल्यों, विश्वासों, अभिवृत्तियों और व्यवहारों–प्रतिमानों में काफी अन्तर पाया जाता है। इसका मूल्य या पीढ़ियों में समय का अन्तर है। पुरानी पीढ़ी के लोगों का समाजीकरण और उनके व्यक्ति का विकास स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व जिस पर्यावरण में हुआ, आज वह काफी कुछ बदल चुका है। वर्तमान में सामाजिक परिवर्तन की गति काफी तीव्र है। आज सामाजिक संरचना में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन दिखायी पड़ते हैं। अब प्रदत्त के बजाय अर्जित परिस्थितियों का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। आज का नवयुवक अपने प्रत्यनों से आगे बढ़ना चाहता है, कुछ स्वतन्त्रता चाहता है, अपने लिए स्वयं कुछ निर्णय लेना चाहता है। वह पुरानी पीढ़ी की तुलना में उदार और मानवतावादी दृष्टिकोण से सोचने लगा है। आधुनिक शिक्षा, पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति ने उसके जीवन मूल्यों को बहुत कुछ प्रभावित किया है।

अन्तर–पीढ़ी संघर्ष राजनीतिक संदर्भ में
राजनीतिक संघर्ष के दो रूप देखने को मिलते हैं, प्रथम एक ही राष्ट्र के विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच होने वाला संघर्ष, द्वितीय विश्व के विभिन्न राष्ट्रों में विचारों के बीच होने वाला संघर्ष जिसे अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष कहा जाता है। जिन राष्ट्रों में विचार व्यक्त करने और संगठन बनाने की स्वतन्त्रता होती है और स्वतन्त्रात्मक प्रकार की शासन व्यवस्था पायी जाती है, वहाँ अनेक राजनीतिक दल बन जाते हैं। ये दल अपने सिद्धांतों, नीतियों और कार्यक्रमों के आधार पर शान्तिमय तरीके से जनता का समर्थन प्राप्त कर अपनी–अपनी सरकार बनाने का प्रयत्न करते हैं। इसे राजनीतिक दलों के बीच पाये जाने वाली प्रतिस्पर्धा कहा जाता है। लेकिन कई बार एक राजनीतिक दल दूसरे दल या विरोधी नेताओं के विरूद्ध घृणा फैलाता है, भ्रामक प्रचार करता है, चरित्र हनन का प्रयास करता है और जब ये बाते बढ़ जाती है तो अपराध एवं मारपीट तक का सहारा लिया जाता है। यह राजनीतिक संघर्ष है। राजनीतिक दलों में पुरानी पीढ़ी एवं नये पीढ़ी के बीच विभिन्न मुद्दों को लेकर मतभेद पैदा होते हैं। नई पीढ़ी उदारवादी होती है एवं पुरानी पीढ़ी परंपरावादी–यहाँ इस प्रकार अन्तर पीढ़ी संघर्ष होता है।

पीढ़ियों का अन्तर
युवा पीढ़ी तथा माता–पिता, शिक्षक आदि की बड़ी पीढ़ी में अन्तर तथा संघर्ष के कारण युवा असन्तोष पैदा होता है। इन दोनों पीढ़ियों के लक्ष्य, मूल्य, आदर्श, सोच आदि में बड़ा अन्तर तथा भिन्नता होती है। नयी पीढ़ी तथा पुरानी पीढ़ी के टकराव तथा संघर्ष पर दामले तथा लैरी रे ने अपने विचार व्यक्त किये हैं।

दामले [1] के अनुसार नयी पीढ़ी स्वयं ऊपर उठना चाहती है और अपना अलग व्यक्तित्व या अस्तित्व बनाना चाहती है लेकिन समाज की विभिन्न परिस्थितियाँ उसके ऐसा करने के रास्ते में बाधक होती है।

लैरी रे का कहना है कि राजनैतिक परिवर्तन और औद्योगिक, तकनीकीकरण के कारण युवाओं के मन में परम्परागत जीवन–मूल्यों और सांस्कृतिक और सामाजिक स्थापनाओं के प्रति आस्था समाप्त हो गई है। आज का युवा दो विरोधी मूल्यों, मान्यताओं तथा आदर्शों के संघर्ष के बीच जी रहा है। यही युवा असन्तोष तथा अनुशासनहीनता पैदा कर रही है। अनेक समाजशास्त्रियों तथा शिक्षा–शास्त्रियों ने युवा समस्या व असन्तोष का मुख्य कारण पुरानी पीढ़ी और युवा पीढ़ी के मूल्यों का संघर्ष बताया है।[2]

मार्टन के विचार

मार्टन के सिद्धान्त के अनुसार युवा अनुशासहीनता की व्याख्या निम्न प्रकार से की जा सकती है। इनका मत है कि समाज में सांस्कृतिक लक्ष्य होते हैं तथा उन लक्ष्यों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए संस्थागत साधन होते हैं। जब कोई व्यक्ति उनसे भिन्न लक्ष्यों का चयन करता है अथवा संस्थागत साधनों का भी उपयोग नहीं करता है तो ये अनुशासनहीनता है तब अनुशासनहीनता इतनी अधिक हो जाती है कि उसे नियंत्रित करना कठिन हो जाता है तो समाज में विघटन तथा अव्यवस्था की स्थिति पैदा हो जाती है।[3] सांस्कृतिक लक्ष्यों और संस्थागत साधनों के संदर्भ में युवा अनुशासनहीनता निम्न तीन प्रकार की स्थिति के रूप में हो सकती हैः

- जब युवा सांस्कृतिक लक्ष्यों के अतिरिक्त अन्य लक्ष्यों का चयन करता है परन्तु पूर्ति के लिए संस्थागत साधनों का चयन करता है तो अनुशासनहीनता होती है। समाज की संस्कृति के अनुसार लक्ष्यों, इच्छाओं या आवश्यकता का चयन नहीं है। अन्य लक्ष्यों का चयन किया है जो संस्कृति के अनुसार मान्य नहीं है।
- जब युवा सांस्कृतिक लक्ष्यों, उद्देश्यों तथा आवश्यकताओं के अनुसार अपने लक्ष्यों तथा आवश्यकताओं का चुनाव करता है परन्तु उनकी पूर्ति करने के लिए संस्थागत साधनों का चयन नहीं करता है बल्कि अन्य अमान्य साधनों के द्वारा अपने लक्ष्यों को पूरा करता है तो यह भी अनुशासनहीनता है।
- तीसरे प्रकार की अनुशासनहीनता वह है जिसमें युवा–सांस्कृतिक लक्ष्यों तथा संस्थागत साधनों दोनों ही परित्याग करके अपनी इच्छानुसार अन्य लक्ष्यों तथा अपरम्परागत साधनों का चयन करता है। यह अनुशासनहीनता अधिक विघटनकारी होती है। आज यह अराजकता की स्थिति पैदा कर सकती है।

युवा जब अपने लक्ष्यों तथा साधनों को अपनी क्षमता तथा पहुँच के बाहर पाता है तो उससे समस्या उत्पन्न होती है, उसमें असन्तोष पैदा हो जाता है जो उसे अनुशासनहीनता करने के लिए विवश करती है।

अस्थाना एवं सूमा चिटिनस ने विद्यार्थी अनुशासनहीनता की परिभाषा व्यक्त करते हुए कहा है कि ''विद्यार्थी अनुशसानहीनता से अभिप्राय शिक्षण संस्थाओं के नियमों, विधि–विधानों एवं परम्पराओं के प्रति अवज्ञा करना एवं उसका पालन करना है।''[4] लिप्सेट के अनुसार जो युवा घर से बाहर जितने अधिक समय तक रहेगा उसके छात्र आन्दोलन में हिस्सा लेने की उतनी ही अधिक संभावना होगी।[5] स्पष्ट है कि परिवार का नियंत्रण युवा पीढ़ी पर जितना शिथिल तथा कमजोर होगा उनके अनुशासनहीन होने की संभावना भी उतनी ही अधिक होगी।

युवा वर्ग

युवा वर्ग सभी कालों और सभी स्थानों पर समाज का एक गतिशील व प्रगतिशील घटक होता है। विश्व इतिहास में इस बात के पर्याप्त प्रमाण है कि युवा अनेक राष्ट्रों के भाग्य विधाता व व्यवस्थापक रहे हैं। सभी कालों में सभ्यता की उत्पत्ति युवाओं के जोखिम, साहस, कल्पना व त्याग में परिलक्षित होती है। युवा निश्चित रूप से शक्ति, आदर्श, अस्थिरता, निश्चय और त्याग का प्रतीक एवं मूर्त रूप है। युवा वास्तव में उत्साह और सर्वांगीण क्रियाओं के सम्पादन की क्षमता से परिपूर्ण हैं जो ऊर्जा के उपयोग अथवा अभिव्यक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है।

हिन्दुस्तान की परम्पराएँ और जीवन के नजरियें को देखकर, यह भविष्यवाणी बड़ी आसानी से ही की जा सकती है कि इस देश में यदि क्रान्ति संभव है तो वह है युवा क्रान्ति। आज इस देश के कोने–कोने से हमारे युवक वर्ग में जो असीम असन्तोष, निराशा व तनाव एवं उसी के फलस्वरूप युवा आंदोलन देखने को मिल रहा है। वह संभवतः उसी क्रान्ति की पूर्व सूचना है और ऐसा क्यों न हो? आजादी मिले 70 वर्ष के बाद भी युवा वर्ग को जीवित रहने का एक स्वस्थ आधार, अपने व्यक्तित्व को निखारने के लिए आवश्यक सुविधाएँ और डिग्रियाँ प्राप्त करने के बाद भी रोजगार का कोई ठिकाना प्राप्त नहीं हो सकता है तो उसमें असन्तोष व विद्रोह की आग भड़क उठना स्वाभाविक ही है।

युवाओं की स्थिति

अब वह जमाना नहीं रहा, जब युवा वर्ग आँख मूंदकर अपने बड़े–बूढ़ों का अनुसरण या अनुकरण मात्र ही करते थे। शिक्षा का विस्तार, यातायात और संचार के साधनों में उन्नति, युवा संगठन आदि के कारण अब युवा वर्ग केवल अपने अधिकारों के संबंध में ही नहीं अपितु अपने चारों ओर की परिस्थितियों विशेषकर शिक्षा संबंधी आर्थिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों व समस्याओं के संबंध में वह उत्तरोत्तर, सचेत होता जा रहा है। संभवतः ही उसे अपने लिए कुछ चीजों या अवस्थाओं की जरूरत होती है और जब वर्तमान परिस्थितियों में वह चीजें उसे यूँ ही प्राप्त नहीं होती है तो उसे बाध्य होकर उन्हें प्राप्त करने के लिए युवा वर्ग को क्रियात्मक कदम उठाना या आंदोलन करना पड़ता है चाहे वह क्रियात्मक कदम राजनीतिक नेताओं या कुलपति का घेराव करना हो अथवा जूलूस और नारेबाजी हो अथवा हड़ताल करना हो। वास्तव में युवा क्रियावाद वह आन्दोलनात्मक विचारधारा व कर्म पद्धति है जो युवा वर्ग में वर्तमान परिस्थितियों के प्रति असन्तोष, अपने भविष्य के संबंध में घोर निराशा और कुछ सीमा तक राजनीतिक पार्टियों द्वारा उन्हें गुमराह कर देने के फलस्वरूप पनपता है और जो अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अहिंसात्मक एवं हिंसात्मक दोनों ही तरीके को अपनाते हैं। इसी से युवा क्रिया व वाद या छात्र अशांति व हिंसा की प्रकृति स्पष्ट है। सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में युवाओं की स्थिति निम्नवत् है :

(1) शिक्षा के क्षेत्र में : शिक्षा के क्षेत्र में युवा क्रियावाद सबसे उग्र और स्पष्ट है जो कि इस देश के प्रत्येक प्रान्त के स्कूलों, कॉलेजों तथा विश्वविद्यालयों में हर सत्र में दाखिले के प्रश्न को लेकर प्रारंभ होता है, छात्र संघ के चुनाव के समय उग्र स्तर पर पहुँचता है, किसी प्राचार्य या उप कुलपति या पुलिस की किसी अन्यायपूर्ण कार्यवाही या नीति के ही प्रश्न को लेकर हड़ताल, तोड़–फोड़ आदि हिंसात्मक कार्यों में बदल जाता है और सबसे आखिर में परीक्षाओं का बहिष्कार अथवा नकल करने से रोकने वाले शिक्षकों को धमकी या उनकी पिटाई के साथ युवा क्रियावाद अथवा आन्दोलन का एक सत्र समाप्त होता है। रामचन्द्र उपाध्याय ने ऐसी ही विभिन्न आन्दोलनात्मक घटनाओं व उनके कारणों का बड़ा रोचक वर्णन प्रस्तुत करते हुए कहा है कि ''काशी विश्वविद्यालय का आंदोलन कुछ छात्र नेताओं के निष्कासन को वापस करने के लिए हुआ, गोरखपुर विश्वविद्यालय

का आंदोलन शुरू में गोली चलने और उसके बाद पुलिस प्रवेश को लेकर हुआ, बिहार का आंदोलन पुलिस जुल्म के कारण हुआ, लखनऊ का छात्र आंदोलन कुछ स्थानीय मांगों को लेकर हुआ, कानपुर का आंदोलन कक्षाओं में छात्रों की संख्या बढ़ाने को लेकर हुआ, देवरिया में आंदोलन अध्यापक की कोतवाल द्वारा पिटाई पर हुआ, फैजाबाद व पिथौरागढ़ में आंदोलन पृथक विश्वविद्यालय खोलने के सवाल पर हुआ, इलाहाबाद में आंदोलन एक छात्र नेता के निष्कासन के सवाल पर हुआ।''

(2) आर्थिक क्षेत्र में युवा : आर्थिक क्षेत्र में युवा आंदोलन मुख्य रूप से रोजगार की समस्या को लेकर घटित होता है। अधिकांश युवक शिक्षा समाप्ति के बाद किसी न किसी नौकरी में लग जाना, अपने तथा परिवार के लिए आर्थिक सुरक्षा प्राप्त करना चाहता है।

(3) राजनीतिक क्षेत्र में युवा : राजनीतिक क्षेत्र भी युवा से अछूता नहीं है। छात्रों के द्वारा राजनीति में सक्रिय भाग लेना आज एक आम घटना बन गई है। इसका उज्जवल दृष्टान्त आम चुनाव में कई छात्र नेताओं का विधानसभा तथा लोकसभा के सदस्य चुना जाना है। छात्रों के लिए अब चुनावों में खुलकर भाग लेने के प्रति झुकाव राजनीतिक दल के प्रत्याशी अपने पक्ष में छात्र नेताओं का समर्थन प्राप्त करने का भरसक प्रयत्न करते हैं और इन्हीं के द्वारा चुनाव प्रचार कार्य भी करते हैं। इतना ही नहीं, एक युवा वर्ग तो आज शासन के अन्दर प्रत्यक्ष रूप से घुस बैठा है और यह चाहता है कि वयोवृद्ध नेताओं को हटाकर स्वयं शासन की बागडोर को संभाल ले। उसका यह मत है कि वर्तमान परिस्थितियों को वे जितना अच्छी तरह से समझते हैं उतना और कोई नहीं। इसलिए शासन सत्ता उनको मिलनी चाहिए। इस दिशा में शासन के अन्दर और बाहर आज भारत के सभी राज्यों में तैयारियाँ चल रही है।

(4) सार्वजनिक क्षेत्र में युवा : सार्वजनिक सभाओं, संगीत समारोह, कवि सम्मेलनों, सिनेमाघरों तथा खेलकूद के मैदानों में अनेक क्रिया–कलापों के बारे में अक्सर सुनने को मिलता है। कहीं पर उन्हें प्रवेश का उचित अधिकार नहीं मिला और कहीं पर उन्हें टिकट न मिलने की शिकायत है, कहीं पुलिस अफसरों द्वारा उन पर अत्याचार की घटना है तो कहीं सिनेमा या खेलकूद के टिकटों का ब्लैकमेल किये जाने के विरूद्ध उनकी शिकायत है पर केवल शिकायत करने तक ही उनका क्रियावाद समाप्त नहीं हो जाता है, शिकायत के साथ ही साथ हुल्लड़ मचाया जाता है, जूलूस निकाले जाते हैं, नारे लगाए जाते हैं, विरोध सभाएँ होती है, सिनेमा के मैनेजर को पीटा जाता है अथवा सिनेमाघर में आग लगा दी जाती है, खेल के मैदान के फर्नीचर को तोड़ा जाता है और यदि पुलिस उनके इस कार्यों की रोकथाम करने आती है तो ईंटों, पत्थरों तथा सोडे की बोतलों से उनका स्वागत किया जाता है। लखनऊ, इलाहाबाद, दिल्ली, बनारस, कलकत्ता, कानपुर, चेन्नई, मुम्बई आदि सभी प्रमुख नगरों में इस प्रकार की कितनी ही घटनाएँ अक्सर होती रहती है।

युवाओं की समस्याएँ

युवा वर्ग भी सम्पूर्ण समाज व्यवस्था का एक अंग है और इसीलिए युवा क्रियावाद भी उस समाज व्यवस्था की वर्तमान परिस्थितियों का परिणाम है। भारत में कुछ वर्तमान सामाजिक परिस्थितिया युवाओं की समस्याओं को बढ़ावा देती है। वे परिस्थितियाँ निम्न हैं–

(1) आर्थिक असमानता एवं प्रतिस्पर्धा : समाजवादी की ओर बढ़ने का प्रयत्न किए जाने पर भी आधारभूत रूप में भारत में पूँजीवादी अर्थ व्यवस्था की ही प्रधानता है। फलतः इस देश में आर्थिक असमानताएँ बहुत अधिक है। आज के युवा वर्ग इस असमानता का स्वयं ही शिकार हैं और इसके पंजे से छुटकारा पाने के लिए वह कई ढंग से छटपटाता है। यहीं युवा असन्तोष व आंदोलन का श्रीगणेश होता है। इतना ही नहीं, आज हर क्षेत्र में गला काट व अनैतिक प्रतिस्पर्धा का बोलबाला है। दूसरी ओर हमारी शिक्षा इतनी अव्यवहारिक है कि अधिकांश युवक इस प्रतिस्पर्धा से जूझ नहीं पाते हैं। फलतः उसमें तनाव उत्पन्न होता है। वे एक तरह से चिढ़कर आंदोलनात्मक कार्यवाही को ही चुन लेते हैं।

(2) भयंकर बेरोजगारी तथा मंहगाई : भारत में बेरोजगारी की समस्या दिन–प्रतिदिन गंभीर होती जा रही है। सबसे दयनीय स्थिति है उच्च शिक्षा प्राप्त व कुशल शिक्षित बेरोजगारों की। जब शिक्षा, सामर्थ्य और इच्छा तीनों रहते हुए भी देश के असंख्य युवकों को काम करने का अवसर नहीं मिलता तो आंदोलनात्मक कदम उठाने के अलावा उनके सामने दूसरा विकल्प ही क्या रह जाता है? यूँ भी खाली मस्तिष्क शैतान का घर होता है, उस पर जब भीषण महगाई का चाबुक चलता है तो वह करो या मरो का बीड़ा भी उठा लेता है। हमें डिग्री नहीं, रोजी–रोटी चाहिए, बेकारों को काम दो या बेकारी का दाम दो, का उनका नारा और उस दिशा में उनके द्वारा उग्र प्रदर्शन आदि इसी परिस्थिति का परिणाम होता है।

(3) उचित शिक्षा व्यवस्था का अभाव : अंग्रेजों से विरासत में प्राप्त, हमारी आज की सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था ही दोषपूर्ण और अनुचित है। वह हमारी वर्तमान आवश्यकताओं व उद्देश्यों को पूरा करने में पूर्णतया असफल है। फिर भी उसी व्यवस्था को हम जबरदस्ती घसीट रहे हैं। फलतः हमारे युवक वर्ग को केवल किताबी ज्ञान ही प्राप्त हो पाता है और शायद वह भी नहीं, विशेषकर उस अवस्था में जबकि दोषपूर्ण परीक्षा पद्धति के अन्तर्गत वह नकल करके पास होता है अथवा होना चाहता है। आज की शिक्षा उन्हें वास्तविक परिस्थितियों का सामना करने लायक अथवा रोजी–रोटी कमाने के मामले में स्वयं अपने पैरों पर खड़े होने योग्य नहीं बनाती है। इसका स्वाभाविक परिणाम उनमें असन्तोष व निराशा की भावना का पनपना ही होता है। लक्ष्यहीन शिक्षा आज के युवा वर्ग को भी लक्ष्य भ्रष्ट कर देती है। साथ इस शिक्षा के संबंध में सरकार की नीति भी कुछ अजीब व अनिश्चित है। वह छात्रों की वास्तविक समस्याओं को न तो समझते हैं और न ही समझने की कोशिश करते हैं। इससे भी असन्तोष व आंदोलन को बढ़ावा मिलता है।

(4) असुरक्षा की भावना : आज के नवयुवकों में एक अजीब असुरक्षा की भावना घर कर गई है। मनोवैज्ञानिक तौर पर वह किसी पर भरोसा नहीं कर पाता है न तो दोस्तों पर, न शिक्षक पर और न ही परिवार या समाज पर। वह अपने जीवन की दिशा व लक्ष्यों को सुनिश्चित नहीं कर पाता है, वह नहीं जानता है कि शिक्षा प्राप्त करने के बाद उसे वास्तव में क्या करना है। उनके लिए स्वयं उसका ही भविष्य अन्धकरामय दिखता है। अतः वह एक मानसिक तनाव की स्थिति में होता है जोकि उसे उग्र और विघटनकारी कार्यों की ओर खींच ले जाता है।

(5) औद्योगीकरण व नगरीकरण : औद्योगीकरण व नगरीकरण की प्रक्रिया ने केवल शहरो के ही नहीं, अपितु गाँव के युवक वर्ग को भी प्रभावित किया है। नगरीकरण व औद्योगीकरण ने यदि एक ओर शिक्षा व नौकरी की सुविधाओं को बढ़ाया है तो दूसरी ओर ग्राम उद्योग को नष्ट भी किया है। इन दोनों ही कारणों से गाँव के अनेक युवक शहर में आकर बस जाते हैं और बेरोजगारी की समस्या को बढ़ाते हैं। साथ ही नगरीकरण व औद्योगीकरण ने संयुक्त परिवार को विघटित किया, परिवार के महत्त्व को कम किया, व्यापारिक मनोरंजन को पनपाकर युवा वर्ग के दिल व दिमाग को दूषित किया, बुरी आवास व्यवस्था को उत्पन्न कर शारीरिक व नैतिक पतन का रास्ता साफ किया और नगर के अन्य प्रलोभनों ने युवकों को अपनी बाहों में समेटकर भ्रष्ट किया। परिणाम जो कुछ हुआ असन्तोष व आंदोलन के रूप में हमारे सामने हैं।

(6) पारिवारिक नियंत्रण का ह्रास : व्यक्तिवादी मनोभाव, रोजी–रोटी की विकट समस्या, बेरोजगारी, महंगाई आदि ने आज परिवार के नियंत्रणात्मक प्रभाव को बहुत दूर किया क्योंकि केवल

पिता को ही नहीं, आज माता को भी पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नौकरी करनी पड़ती है। फलतः बच्चे पर उनका नियंत्रण ढीला पड़ जाता है। साथ ही युवा वग की अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति परिवार के द्वारा नहीं अपितु बाहरी संस्थाओं द्वारा होती है। इस कारण उसका अधिकतर समय परिवार से बाहर ही व्यतीत होता है जिसके कारण उसके लिए परिवार का महत्त्व व नियंत्रण अने आप ही घट जाता है। जब परिवार के बड़े–बूढ़े, युवा सदस्यों पर उचित निगरानी व नियंत्रण नहीं रख पाते हैं और न ही उनका सही मार्ग निर्देशन करते हैं, तो उसके लिए युवा अवस्था के उग्र बहाव में बह जाना भी स्वाभाविक है।

(7) उचित मनोरंजन के साधनों का अभाव : हमारा समाज युवा वर्ग के लिए उचित मनोरंजन की भी व्यवस्था नहीं करता। यह बात विशेषकर औद्योगिक नगरों पर लागू होती है जहाँ कि भूमि के अत्यन्त अभाव के कारण पार्क, खेलकूद के मैदान, सार्वजनिक मनोरजन के अभाव में आज का युवा वर्ग मनोरंजन का कोई न कोई जोखिम युक्त व उमंग भरा उपाय चुन लेता हैं। हम निश्चित रूप से जानते हैं कि जलूरः, नारेबाजी, प्रदर्शन, तोड़–फोड़, हड़ताल आदि कार्यवाहियों में अनेक युवक–युवतियाँ केवल मनोरंजन या मखौल के लिए ही भाग लेते हैं।

(8) राजनीतिक प्रभाव : आज के युवा वर्ग में राजनीतिक जागरूकता तेजी से बढ़ती जा रही है, इसीलिए वह खुलकर राजनीति में भाग भी ले रहा है। फलतः देश में आज युवा नेतृत्व का विकास हो रहा है। यह कॉलेज के छात्रसंघ का चुनाव लड़ने और उस चुनाव को अच्छे–बुरे किसी भी तरीके से जीतने से प्रारंभ होता है और फिर लोकसभा या विधानसभा के चुनाव की ओर आगे बढ़ता है। इसके प्रत्येक स्तर पर युवा आन्दोलन ही सामने आता है। इसके लिए कुछ राजनीतिक दल व नेता भी समान रूप से उत्तरदायी होते हैं जो कि अपने दलगत व व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति के लिए युवकों को भड़काते व काम में लगाते रहते हैं। इन नेताओं के कहने में आकर भी युवा वर्ग जुलूस, प्रदर्शन, तोड़फोड़, हड़ताल आदि करता है।

(9) सरकार की गलत नीति : सरकार की गलत नीति के कारण युवा असन्तोष व आन्दोलन को बढ़ावा मिलता है। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश में चौधरी चरण सिंह मत्रिमंडल ने छात्रसंघ की सदस्यता को ऐच्छिक बनाने के लिए कानून बनाया तो उसके विरोध में काला कानून वापस लो नारे के छात्र आंदोलन की आग भड़क उठी। इसी प्रकार तीन विषय पढ़ाए जाए या चार, ऐसे कानूनों द्वारा जानबूझकर सरकारी तौर पर आन्दोलन कराया जाता है। केवल इतना ही नहीं जब सरकार द्वारा किसी ऐसे व्यक्ति को विश्वविद्यालय का कुलपति बना दिया जाता है जो स्वयं से रिटायर हो चुका है और जो आजीवन शिक्षा मित्र से दूर रहा है तो ये लोग विश्वविद्यालयों में पहुँचते ही अंग्रेजी का प्रयोग, चाटुकारिता को बढ़ावा तथा तमाम सही निर्णयों को रद्द कर अनाप–शनाप निर्णय लेना आरंभ कर देते हैं तो विश्वविद्यालय के छात्र आसानी से बेकार को काम दो कहना भूलकर कुलपति की तानाशाही नहीं चलेगी कहना प्रारंभ कर देते हैं।

(10) गलत नेतृत्व : आज के युवा क्रियावाद या आंदोलन का एक महत्त्वपूर्ण कारण यह भी है कि युवा वर्ग को उचित नेतृत्व नहीं मिल रहा है। पिछले कई वर्षों से विश्वविद्यालयों का नेतृत्व चिन्तनशील समझदार युवा से वंचित होता जा रहा है, क्योंकि यह नेतृत्व उसी के पास रहता है जो छात्रसंघ का चुनाव जीतकर आए और छात्रसंघ का चुनाव जीतकर आ सकता है जिसके पास धन संग्रह की कला हो, जिसके पास पर्याप्त शक्ति हो, जिसकी जाति बिरादरी की अच्छी खासी तादाद हो और जो वाणी को तेज चलाने की कला जानता हो, भले कर्म से उसका कोई मतलब न हो। ऐसे छात्र नेता युवा वर्ग को केवल गुमराह ही करते हैं और अपने व्यक्तिगत व दलगत स्वार्थ सिद्ध के लिए युवकों को प्रदशर्न, तोड़फोड़, मारकाट, हड़ताल आदि के लिए भड़काते रहते हैं।

वृद्धजन

बचपन की चंचलता, यौवन की चपलता और प्रौढ़ता के गाम्भीर्य से प्राप्त अनुभव वृद्धावस्था को जीवन की पूर्णता पर पहुँचा कर उसे भविष्य का आधार बना देते हैं। अपने वृद्धों को सामर्थ्यहीन मानना न केवल अनुचित है बल्कि समाज के प्रति अन्याय भी है। भारत में विगत पाच दशकों में बुजुर्गों की निरन्तर हाशिए पर धकेलने का काम परिलक्षित हुआ है। वर्तमान में वृद्धों एवं युवा पीढ़ी के बीच संवादहीनता की खाई इतनी गहरी हो गई है कि वृद्धों को अनावश्यक तनाव के दंश को सहना पड़ता है।

समृद्धि की आधुनिक परिभाषा से नैतिक, सैद्धान्तिक, वैचारिक और मूल्यगत समृद्धि की अवधारणाएँ तेजी से नष्ट होती जा रही है। मानव की समृद्धि का एक ही अर्थ रह गया है–भौतिक सम्पन्नता। बुजुर्गों के अनुभव 'स्क्रैप' कहकर खारिज किया जा रहा है। वे आउटडेटेड और ओल्ड फैशड जैसे सम्बोधनों से सम्बोधित किये जा रहे हैं। समाज में नयी सोच को अवलोकित करने से प्रतीत होता है कि वृद्धावस्था मानो जीवन का अंग ही नहीं है। उसे तो सुख–मृत्यु के हाथों दे देना चाहिए।

परिवारिक संबंधों के खास ताने–बाने से संरचित भारतीय समाज में भी उपेक्षित स्थिति निर्मित हो रही है। युग तेजी से करबट बदल रहा है। परिणामतः जीवन मूल्यों में निरन्तर गिरावट आती जा रही है। भौतिक उन्नति वरदान से अधिक अभिशाप सिद्ध हो रही है। भारतीय संस्कृति के मूल आधार संयुक्त परिवार आज टूटते चले जा रहे हैं। जहाँ पर भी संयुक्त परिवार विद्यमान है वहाँ का वातावरण वृद्धों की मानसिकता एवं शारीरिक स्थिति के अनुकूल नहीं है। धनोपार्जन की तलाश और शहरी जीवन के माह में आज की युवा पीढ़ी प्रायः नगरों की ओर आकर्षित हो रही है। फलस्वरूप वृद्धों के प्रति उदासीनता बढ़ रही है, उपेक्षापूर्ण दृ ष्टिकोण ने वृद्धों एवं असमर्थों के लिए गहन समस्या उत्पन्न कर दी है।

चिकित्सा पद्धति में उन्नति के साथ–साथ औसत आयु के स्तर में भी वृद्धि हुई है। परिणामतः वृद्धों की संख्या में वृद्धि हो रही है। भारतीय संस्कृति में वृद्ध माता–पिता एवं परिवार में सभी वृद्धजनों को भगवान का पद दिया जाता है किन्तु आज के प्रगतिशील युग में हर क्षण बदलते सामाजिक परिवेश में नई पीढ़ी से ऐसी आशा करना ही दुराशा मात्र है। नई पीढ़ी अपने पैरो पर खड़े होते ही वृद्धजनों को अनुपयोगी और भार स्वरूप समझने लगती है। छोटी उम्र से ही उनके अनुशाससन में रहना उन्हें अच्छा नहीं लगता। जिन वृद्ध माता–पिता के हाथों में आर्थिक संसाधन केन्द्रित है वहाँ निहित स्वार्थों के कारण वातावरण कुछ भिन्न है। इसके विपरीत जो माता–पिता सन्तान पर आश्रित है उनके प्रति श्रद्धा सत्कार तो दूर की बात है प्रायः कर्तव्य की भावना भी दृष्टिगोचर नहीं होती है।

उम्र बढ़ोत्तरी एक प्राकृतिक एवं अनुलोम (पीछे न जाने वाली) जीवन पद्धति है। इस तथ्य की वास्तविकता अक्सर भ्रामक होती है। बहुत से वृद्ध जो वृद्धावस्था की ओर बढ़ रहे हैं, ऐसा दृ ष्टिकोण अपनाने को प्रेरित होते हैं, जो उम्र बढ़ोत्तरी या वृद्धावस्था के क्रम को गतिशीलता प्रदान कर सकता है और बुजुर्ग या वृद्धों को हाशिए में डाल सकता है।

वृद्धावस्था को समझने में दो तथ्य महत्त्वपूर्ण होते हैं जो परस्पर भिन्न होते हुए भी पारस्परिक रूप से संबंधित होते हैं। वे हैं–

(1) शारीरिक उम्र एवं (2) सामाजिक उम्र

शारीरिक उम्र एक व्यक्ति की जैविक दशाओं में परिवर्तन जैसे–बालों के रंग में परिवर्तन, दाँत गिरना, दृष्टि दोष उत्पन्न होना या कमजोर होना, व्यक्तिगत आवश्यकताओं में ध्यानाकर्षण की स्थिति, शारीरिक व्याधियाँ या रोग आदि से संबंधित है।

दूसरा तथ्य सामाजिक उम्र बढ़ोत्तरी जैसे– सामाजिक सुरक्षा, किसी संगठित क्षेत्र में सेवा से निवृत्त डेमोग्राफिक वर्गीकरण, समाज और व्यक्ति पर इसके प्रभाव आदि से संबंधित प्रशासनिक आधार पर निश्चित की जाती है।

उपर्युक्त दो तथ्य वृद्धावस्था को समझने के महत्त्वपूर्ण आधार है, फिर भी इन तथ्यों के आधार पर वृद्धावस्था को परिभाषित करना कठिन है। किसी ने एक बार कहा था कि मेरे लिए बूढ़ी उम्र मुझसे पन्द्रह वर्ष अधिक है, अर्थात् जो मेरी उम्र से पन्द्रह वर्ष बड़ा है, वह बूढ़ा है। यही कारण है कि युवक–युवतियाँ (13 से 19 के मध्य) 30 वर्ष की उम्र वालों को बूढ़ा या बूढ़ी समझते है। जो 45 वर्ष के उम्र के हैं वे 60 वर्ष की उम्र वालों को बूढ़ा समझते हैं। यहाँ तक कि वृद्ध लोग बमुश्किल महसूस करते हैं कि वे वृद्ध है। व्यावहारिक रूप से वृद्धावस्था का विभाजन करने वाली रेखा सेवानिवृत्त की उम्र को माना जाता है, जो सेवानिवृत्ति हो जाते हैं उन्हें वृद्धों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

निष्कर्ष

उल्लेखनीय है कि उम्र से बुढ़ा होने पर ये बाते होती है कि उन्हें अनुभव अधिक होता है। वे अपने अनुभव के आधार पर निर्णय लेते हैं। अपने से छोटों को सलाह देते हैं। परंपरागत विचारों को ठोते हैं, दूसरी आर युवा वर्ग वैज्ञानिक सोच के आधार पर तर्क की कसौटी पर कसकर ही किसी विचार को ग्राह्य करना पसंद करते हैं। यही द्वन्द्व दोनों पीढ़ी में चलता रहता है।

संदर्भ

1. वाई. बी. दामेल (1966) : कॉलेज युथ इन पूना, डिकॉन कॉलेज, पूना, पृ.– 38
2. लैरी रे (2011) : भोआइलेन्स एण्ड सोसायटी, सेज पब्लिकेशन, यू.के. पृ.– 49
3. रोबर्ट किंग मार्टन (1968) : सोशल थ्योरी एण्ड सोशल स्ट्रक्चर, सिमॉन एण्ड सचस्टर, न्यूयॉर्क, पृ.– 272
4. एच.एस. आस्थाना एवं सुमा चिटनिस (1967) : डिर्स्टव कैम्पस, नेशनल काउन्सिल ऑफ एजुकेशन रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग, नई दिल्ली, पृ.– 311–334
5. सेमूर मार्टिन लिप्सेट (1967) : स्टूडेन्ट पॉलिटिक्स, बेसिक बुक, न्यूयॉर्क, पृ.– 157